DSSSB TGT & PGT
दिल्ली अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड
ROJGAR
ANKIT
Part-B
SCHOLAR BATCH
संस्कृत
सन्धि
Part -7
LIVE 27-03-2024 05:00 PM

पूर्वरूपविधायकं विधिसूत्रम्

एङः पदान्तादति ६ । १।१०९ ॥

पदान्तादेङनेऽति परे पूर्वरूपमेकादेशः स्यात् ।

हरेऽव । विष्णोऽव ।

एङः पदान्तादति । एङः पञ्चम्यन्तं पदान्तात् पञ्चम्यन्तम्, अति सप्तम्यन्तं, त्रिपदमिदं सूत्रम् । अमि पूर्वः से पूर्व की अनुवृत्ति आती है। एकः पूर्वपरयोः का अधिकार है।

पदान्त एङ् से ह्रस्व अकार के परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एक आदेश होता है।

ए/ओ + अ

ऽ

हरे + अव

जैसे एङि पररूपम् यह सूत्र पररूप करता है उसी प्रकार एङः पदान्तादति यह सूत्र पूर्वरूप करता है । पररूप में पूर्व और पर के स्थान पर परवर्णसदृश वर्ण हो जाता है और इसके विपरीत पूर्वरूप में पूर्व और परवर्ण के स्थान पर पूर्ववर्णसदृश वर्ण होता है। दोनों में पूर्व और पर के स्थान पर एकादेश ही होता है।

प्रकृतिभावविधायकं विधिसूत्रम्

सर्वत्र विभाषा गोः ६ । १ । १२२ ॥

लोके वेदे चैङन्तस्य गोरति वा प्रकृतिभावः पदान्ते ।
गोअग्रम्। गोऽग्रम्। एङन्तस्य किम्? चित्रग्वग्रम्। पदान्ते किम्? गोः।

सर्वत्र विभाषा गोः । सर्वत्र त्रल्प्रत्ययान्तम् अव्ययं विभाषा प्रथमान्तं, गोः षठ्यन्तं, त्रिपदमिदं सूत्रम् । इस सूत्र में एङः पदान्तादति से पदान्तात् को सप्तमी विभक्ति में विपरिणाम करके पदान्ते तथा एङः एवं अति की और प्रकृत्यान्तः पादमव्यपरे से प्रकृत्या की अनुवृत्ति आती है। लौकिक एवं वैदिक प्रयोगों में एङन्त गो शब्द को विकल्प से प्रकृतिभाव होता है पदान्त में।

सर्वदेशविधानार्थं परिभाषासूत्रम्

अनेकाल् शित्सर्वस्य १।१।५५ ॥

इति प्राप्ते ।

अल्
स्वर और व्यञ्जन (अच् + हल्)

अनेक अल् और शित् आदेश संपूर्ण के स्थान पर होता है

श = इत् = शित्
क् = इत् = कित्
= इत् = टित्

लट्
लृट् टित्

अन्त्यादेशविधानार्थं परिभाषासूत्रम्

ङिच्च १|१|५३ ॥

ङिदनेकालप्यन्त्यस्यैव स्यात् ।

अनेकाल्शित्सर्वस्य । न एकः अनेक : (नञ्तत्पुरुषसमास) । अनेकः अल् यस्य स अनेकाल् (बहुव्रीहिसमासः) अनेकालू प्रथमान्तं, शित् प्रथमान्तं, सर्वस्य षष्ठ्यन्तं, त्रिपदमिदं सूत्रम् ।

अनेक अल् वाला आदेश और शित् आदेश सम्पूर्ण के स्थान पर होते हैं।

सर्वादेशविधानार्थं परिभाषासूत्रम्

अनेकाल् शित्सर्वस्य १।१।५५॥

अन्त्यादेशविधानार्थं परिभाषासूत्रम्

ङिच्च १।१।५३॥

ङिदनेकालप्यन्त्यस्यैव स्यात्।

४५- अनेकाल्शित्सर्वस्य। न एकः अनेकः (नञ्तत्पुरुषसमास)। अनेकः अल् यस्य स अनेकाल् (बहुव्रीहिसमासः) अनेकाल् प्रथमान्तं, शित् प्रथमान्तं, सर्वस्य षष्ठ्यन्तं, त्रिपदमिदं सूत्रम्।

अनेक अल् वाला आदेश और शित् आदेश सम्पूर्ण के स्थान पर होते हैं।

अनेक्+अल्-अनेकाल्। जिस आदेश में अनेक अर्थात् एक से अधिक अल् हों उसे अनेकाल् कहा जायेगा। जिस आदेश में शकार की इत्संज्ञा होगी उसे शित् कहा जायेगा। जब किसी अङ्ग आदि के स्थान पर किसी सूत्र से आदेश का विधान किया जाता है और उसमें स्पष्टतया यह निर्देश नहीं किया गया है कि आदेश सम्पूर्ण स्थानी के स्थान पर हो या स्थानी के अन्तिम वर्ण या आदि-वर्ण के स्थान पर हो। ऐसा अनियम होने पर यह सूत्र परिभाषा बनकर वहाँ पर नियम करता है कि यदि आदेश अनेक अल् वाला या शित् हो तो वह आदेश सम्पूर्ण स्थानी के स्थान पर ही होता है।

यह सूत्र अलोऽन्त्यस्य सूत्र का अपवाद है जो केवल अन्त्य के स्थान पर आदेश होने का विधान करता है।

४६ -ङिच्च। ङित् प्रथमान्तं, च अव्ययपदं, द्विपदमिदं सूत्रम्। अलोऽन्त्यस्य से अन्त्यस्य की अनुवृत्ति आती है।

ङित् आदेश अनेकाल् होने पर भी अन्त्य के ही स्थान पर होता है।

ह सूत्र अनेकाल् शित्सर्वस्य का बाधक है। आदेश यदि अनेकाल् भी हो और ङित् भी हो तो अर्थात् आदेश में ङकार की इत्संज्ञा हो रही हो तो भी वह आदेश सभी के स्थान पर न होकर केवल अन्त्य अल् वर्ण के स्थान पर ही होता है अर्थात् स्थानी में जो अन्त्य-वर्ण, उसीके स्थान पर होता है। इस तरह यह सिद्ध हुआ कि आदेश अनेकाल् हो या न हो, यदि ङित् है तो अन्त्य के स्थान पर होगा एवं अङित् अनेकाल् और शित् आदेश अनेकाल् शित् सर्वस्य के अनुसार सभी के स्थान पर होगा।

DSSSB TGT & PGT संस्कृत SCHOLAR BATCH

अवङ्-आदेशविधायकं विधिसूत्रम्

अवङ् स्फोटायनस्य ६।१।१२३॥

पदान्ते एङन्तस्य गोरवङ् वाऽचि।

गवाग्रम्, गोऽग्रम। पदान्ते किम्? गवि।

पदान्त में जो एङ, तदन्त जो गो-शब्द, इसको अच् के परे होने पर विकल्प से अवङ् आदेश होता है।

स्फोटायन नामक प्राचीन आचार्य के मत में अवङ् का होना और अन्य आचार्यों के मत में न होना, यही विकल्प होना चाहिए था किन्तु सर्वत्र विभाषा गोः से विभाषा के आने के कारण स्वतः विकल्प सिद्ध है। अतः यहाँ पर स्फोटायन का पठन विकल्प के लिए नहीं है अपितु नाम लेकर पाणिनि जी ने स्फोटायन नामक आचार्य का आदर किया है।

अवङ् में ङकार की हलन्त्यम् से इत्संज्ञा होती है और उसका तस्य लोपः से लोप होकर केवल अव ही 'बचता है। ङकार की इत्संज्ञा होने के कारण यह आदेश ङित् है। अतः अन्त्य वर्ण गो के ओकार के स्थान पर आदेश होकर अर्थात् ओकार को हटाकर बैठता है।

गवाग्रम्। गोऽग्रम्। गाय का अग्रभाग। गवाम् अग्रम् (गो+आम्+अग्रम्) में समास होकर विभक्ति का लोप होकर के गो+अग्रम् ऐसी स्थिति है। एङः पदान्तादति से पूर्वरूप प्राप्त था, उसे बाधकर के सर्वत्र विभाषा गोः से प्रकृतिभाव प्राप्त था, उसे भी बाधकर

सूत्र लगा- अवङ्- स्फोटायनस्य। आम् 'विभक्ति का लुकू होने पर भी भूतपूर्व विभक्ति के आश्रयण से गो यह पद है और पदान्त है गो का ओकार। इस तरह पदान्त में एङन्त गो शब्द का ओ है और उससे अच् परे है है अग्रम् का अकार। ङकारं की इत्संज्ञा होने के कारण अवङ् आदेश ङित् है। अतः ङिच्च के नियम से अन्त्य वर्ण ओकार के स्थान पर आदेश हुआ। ग्+अव+अग्रम् बना। ग्+अव में वर्णसम्मेलन होकर गव बना। गव+अग्रम् में अकः सवर्णे दीर्घः से दीर्घ होकर गवाग्रम् सिद्ध हुआ। यह सूत्र विकल्प से अवङ् आदेश करता है। अवङ् न होने के पक्ष में सर्वत्र विभाषा गोः से विकल्प से प्रकृतिभाव हुआ- गो अग्रम् ही रह गया। उक्त प्रकृतिंभाव विकल्प से हुआ है। न होने के पक्ष में एङः पदान्तादति से पूर्वरूप हो खण्डकार (ऽ) होकर गोऽग्रम्। इस तरह तीन रूप सिद्ध हुए। गवाग्रम्, गोअग्रम्, गोऽग्रम्।

अवङ्-आदेशविधायकं विधिसूत्रम्

इन्द्रे च ६।१।१२४॥

गोरवङ् स्यादिन्द्रे। गवेन्द्रः।

गो + इन्द्र

ग् अव + इन्द्र

गव + इन्द्र = गवेन्द्र

इन्द्रे च इन्द्रे सप्तम्यन्तं, च अव्ययपदं, द्विपदमिदं सूत्रम्। सर्वत्र विभाषा गोः से गोः की तथा अवङ् स्फोटायनस्य से अवङ् की अनुवृत्ति आती है।

इन्द्र शब्द के परे होने पर गो-शब्द को अवङ् आदेश होता है।

अवङ् में ङकार की हलन्त्यम् से इत्संज्ञा होती है और उसका तस्य लोपः से लोप हो जाता है। ङित् होने के कारण ङिच्च की सहायता से अन्त्य वर्ण गो के ओकार के स्थान पर होगा।

गवेन्द्रः। श्रेष्ठ बैल, साँड़। गो इन्द्रः में अवङ् स्फोटायनस्य से वैकल्पिक अवङ् आदेश प्राप्त था, उसे बाधकर इन्द्रे च से नित्य से अवङ आदेश हुआ। ङकार की हलन्त्यम् से इत्संज्ञा और तस्य लोपः से लोप होकर अव बचा। ङिच्च की - सहायता से अन्त्य वर्ण गो के ओकार के स्थान पर यह आदेश हुआ है। इस तरह ग्+अव-गव बना है। गव इन्द्रः में आद्गुणः से गुण होकर ग्+अव इन्द्रः बना। गवेन्द्रः सिद्ध हुआ।

DSSSB TGT & PGT संस्कृत SCHOLAR BATCH

प्लुतादेशविधायकं विधिसूत्रम्

दूराद्धूते च ८।२।८४।।

दूरात्सम्बोधने वाक्यस्य टेः प्लुतो वा।

पदान्ते किम्? गवि।

४९- दूराद्धूते च । दूराद् पञ्चम्यन्तं, हुते सप्तम्यन्तं, च अव्ययपदं, त्रिपदमिदं सूत्रम्। वाक्यस्य टेः प्लुत उदात्तः का अधिकार है।

दूर से सम्बोधन करने में प्रयुक्त जो वाक्य, उसके टि को विकल्प से प्लुत होता है।

सभी प्लुतों को वैकल्पिक माना गया है। इस सूत्र से एकमात्रिक ह्रस्व और द्विमात्रिक दीर्घ के स्थान पर त्रिमात्रिक प्लुत आदेश हो जाता है। वैसे लोक में जब किसी का नाम लेकर पुकारते हैं तो स्वाभाविक रूप से प्लुत का ही उच्चारण करते हैं। जैसे अरे देवदत्त ! प्लुत का एक प्रयोजन प्रकृतिभाव करना भी होता है। जहाँ पर प्रकृतिभाव प्राप्त नहीं है, वहाँ केवल उच्चारण काल में भेद होगा। प्लुत हो जाने के बाद उसको समझने के लिए प्रायः ३ का अङ्क लिखने का प्रचलन है।

प्रकृतिभावविधायकं विधिसूत्रम्

प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम् ६।१।१२५॥

एतेऽचि प्रकृत्या स्युः । आगच्छ कृष्ण३ अत्र गौश्चरति ।

प्लुत / प्रगृह्य + अचि = प्रकृतिभाव

हरी + एतौ = हरीएतौ

प्रगृह्यसंज्ञाविधायक संज्ञासूत्रम्

ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम् १।१।११॥

ईत् ऊत् एत्

ईदूदेदन्तं द्विवचनं प्रगृह्यं स्यात्।

हरी एतौ। विष्णू इमौ। गङ्गे अमू।

विष्णू + इमौ = विष्णू इमौ

↓

प्रगृह्य

प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम्। प्लुताश्च प्रगृह्याश्च प्लुतप्रगृह्याः (इतरेतरयोगद्वन्द्वः)। प्लुतप्रगृह्याः प्रथमान्तम्, अचि सप्तम्यन्तं, नित्यं प्रथमान्तं, त्रिपदमिदं सूत्रम्। प्रकृत्यान्तः पादमव्यपरे से प्रकृत्या की अनुवृत्ति आती है।

अच् के परे होने पर प्लुत और प्रगृह्य को प्रकृतिभाव होता है।

प्रगृह्यसंज्ञाविधायक संज्ञासूत्रम्

अदसो मात् १।१।१२॥

अस्मात् परावीदूतौ प्रगृह्यौ स्तः।

अमी ईशाः। रामकृष्णावमू आसाते। मात् किम् ? अमुकेऽत्र ।

५२- अदसो मात्। अदसः षष्ठ्यन्तं, मात् पञ्चम्यन्तं, द्विपदमिदं सूत्रम्। इस सूत्र में इंदूदेद्विवचनं प्रगृह्यम् से ईदूद् और प्रगृह्यम् की अनुवृत्ति आती है।

अदस् शब्द के मकार से परे ईकार और ऊकार प्रगृह्यसंज्ञक होते हैं।